Year-8; Sept. 2017
ISSN–2231-1130
UGC Sr. No. – 48398
VEETHIKA

भारत में जाति का उद्भव एवं विकास

डा. रवि प्रताप सिंह *

जति प्रथा का अर्थ एवं स्वरूप–

समकालीन भारत में जाति–व्यवस्था राजनीतिक एवं सामाजिक संरचना की महत्वपूर्ण घटक है। भारतीय समाजिक संरचना के विषद्, विवेचन के उपरांत हम कह सकते है कि जाति–व्यवस्था समाजिक संगठनों के निर्माण का प्रमुख आधार रहा है। यह सर्वविदित है कि "जाति षब्द की उत्पत्ति संस्कृत की 'जन' धातु से मानी जाती है, जिसका अर्थ 'प्रजाति' 'जन्म' अथवा भेद से किया जाता है। "अंग्रेजी में जाति के लिए कास्ट शब्द का प्रयोग किया जाता है। यह कास्ट षब्द पुर्तगाली शब्द कास्टा से बना है, जिसका अर्थ है नस्ल, प्रजाति एवं जन्म से है।"[1] "कास्ट लैटिन षब्द कास्टस से व्युत्पन्न है।"[2]

आधुनिक समाजशास्त्रियों ने भारतीय जाति–प्रथा पर विभिन्न दृष्टिकोणों से विचार किया है तथा यह निष्कर्ष निकाला है कि, जाति–प्रथा जन्म और वर्गीय ढ़ांचे पर आधारित अत्यंत स्थानीय एवं गतिशील प्रथा है। संभवतः इसलिए समाजषास्त्रियों को जाति शब्द परिभाशित करना दुष्कर सिद्ध हुआ। जे.एच. हट्टन जैसे प्रसिद्ध समाजषास्त्री भी जाति शब्द की सर्वमान्य परिभाषा देने में असमर्थ हैं। श्री हट्टन के अनुसार, "जाति शब्द को परिभाषित करना एक जटिल कार्य है। "[3] इतना ही नही, " प्रख्यात समाजशास्त्री श्री रिजले एवं केतकर ने भी जाति – प्रथा को परिभाषित करने का यथोचित प्रयत्न किया है, किंतु ये भी अपने प्रयास में असफल रहे हैं।"[4] जाति–प्रथा की इसी जटिलता के कारण प्रसिद्ध विद्वान मार्क गेलेंटर ने "भारतीय जाति –व्यवस्था को **कक्षों में विभक्त समाज**"[5] माना है। श्री गेलेंटर ने भारतीय समाज को विविध जीवन शैली वाला राज्य बताया है।

यह सर्वविदित है कि, भारत में जाति – प्रथा का स्वरूप सदैव एक सा नहीं रहा है। आज से दो हजार वर्ष से भी पूर्व जाति–प्रथा का अभ्युदय हुआ था, तब से लेकर अब तक जाति–प्रथा विविध रूप में विद्यमान है। "मध्यकाल में जाति–प्रथा का स्वरूप जटिल था।"[6] फिर भी प्रगतिशील एवं मानवतावादी सन्तों जैसे – "विष्णु स्वामी, निम्बार्क, मध्व, रामानुज और वल्लभाचार्य ने जाति– व्यवस्था के कर्मकांडीय स्वरूप की घोर निंदा की है।"[7] ब्रिटिश काल में जाति– प्रथा के रूढ़िवादी नियमों के विरुद्ध आवाज उठने लगी। इतना ही नहीं, आजादी के संघर्श के दौरान ही दलित एवं वंचित वर्गों के उत्थान के लिए समांतर संघर्ष आजादी के इन मतवालों द्वारा किया गया।

यह सर्वविदित है कि, "भारतीय जाति–व्यवस्था का सर्वाधिक मौलिक तत्व पद सोपान पर आधारित सामाजिक व्यवस्था से है।"[8] भारत में सामान्यतः जाति से व्यक्ति की सामाजिक एवं राजनीतिक सम्बन्धों का निर्धारण होता है। यह सर्वविदित है कि, चुनावों के समय जातियों में अपने उम्मीदवारों को विजयी बनाने के लिए आपसी बंधुत्व की भावना का प्रसार होता है। इतना ही नहीं, राजनीतिक दलों एवं अभिजनों द्वारा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से जातीय अस्मिता का प्रसार एवं प्रचार किया जाता है। हम वर्तमान चुनवों एवं मतदान व्यवहार का विश्लेषण करते हैं, तो जाति–व्यवस्था के कर्मकांडीय स्वरूप का क्षरण होते दिखायी दे रहा है। इतना ही नहीं, "वर्तमान चुनावों में राजनितिक दलों द्वारा जातीय गोलबंदी किया जाता है, ताकि उनके स्वजातीय बन्धु अधिक संख्या में सदन में अपना प्रतिनिधित्व सुनिश्चित कर सके।"[9]

प्रख्यात राजनीतिशास्त्री रजनी कोठारी का भी मानना है कि, वर्तमान समय में लोकतांत्रिक चुनावों में जातिगत चेतना का प्रसार – प्रचार सत्ता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक अभिजनों द्वारा किया जाता है। प्रख्यात राजनीतिशास्त्री इकबाल नारायण ने अपने अध्ययनों के उपरान्त निष्कर्ष निकाला है कि, "राज्यों की राजनीति ने राजनीतिक दलों एवं जातियों के मध्य अंतक्रिया पर बल दिया"[10]। इतना ही नही, "राजनीतिक सत्ता की मुख्य प्रतियोगी के रूप में जाति–समूह राजनीतिक

* असि. प्रोफेसर, राजनीतिशास्त्र, शिया पी.जी. कॉलेज, लखनऊ

दलों के माध्यम से कार्य करते है।"[11]

यह सर्वविदित है कि, सन् 1940 से ही राजनीति में दलित एवं पिछड़ी जातियों के मध्य एकजुटता या गोलबंदी की सुगबुगाहट होने लगी। डा. अम्बेडकर ने वंचित वर्गो के उत्थान एवम आत्मविश्वास के लिए अथक प्रयास किया। इतना ही नहीं, "डा. अम्बेडकर ने दलितों को क्षत्रिय जाति का बताकर दलितों में चेतना का प्रसार कर संगठित किया।"[12] डा. अम्बेडकर के इन्हीं सार्थक प्रयासों से प्रभावित होकर "एम.बी. पायली ने इन्हें आधुनिक काल का मनु कहा है।"[13] "संविधानविदों के अथक प्रयास के उपरान्त 29 जुलाई सन् 1948 में संविधान सभा द्वारा अस्पृश्यता को समाप्त कर दिया।"[14] संविधानसभा द्वारा जाति के कर्मकांडीय स्वरूप पर यह प्रगतिगामी, संवैधानिक एवं बाध्यकारी उपबन्ध था। यह जाति–व्यवस्था के कर्मकाण्डीय स्वरूप पर प्रथम जोरदार प्रहार माना गया। "स्वतंत्रता के उपरान्त भारतीय समाज में सदियों से व्याप्त जातीय अन्याय और असमानता दूर करने का अथक प्रयास संविधानसभा के सदस्यों द्वारा किया गया।"[15] अनु. 17 के तहत अस्पृश्यता को उत्सादित एवं दंडनीय अपराध घोषित किया गया।"[16] "प्रसिद्व समाजिक एवं दलित विचारक गेल ओमवेद ने भी भारतीय जाति–व्यवस्था के कर्मकांडीय स्वरूप की प्रखर आलोचना की है।"[17] सुश्री ओमवेद के अनुसार जाति के कर्मकांडीय स्वरूप ही दलित जातियों के शोषण की कारक है। "सुश्री ओमवेद का यह समाजशास्त्री निष्कर्ष महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेष, कर्नाटक की दलित एवं पिछड़ी जातियों के सामाजिक एवं आर्थिक हैसियत अध्ययन के उपरांत व्यक्त की गई है।"[18] इतना ही नहीं, "देश के प्रमुख समाजशास्त्रियों जैसे–योगेन्द्र यादव, डी.एल. सेठ जैसे समकालिक बुद्विजीवियों द्वारा **जातीय दंभ एवम जातीय श्रेष्ठता** की रूढिवादी आग्रह के कारण ही जाति के कर्मकांडीय पक्ष की घोर आलोचना की गयी एवं जातिविहीन समाज की स्थापना को प्रोत्साहित किया गया है"[19]। आजादी के दौरान ही राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने भी छुआछूत को पाप बताया है। इतना ही नहीं, गांधी जी 7 नवम्बर सन् 1933 को वर्धा से अपनी हरिजन यात्रा आरम्भ की। "29 जुलाई 1934 तक देश के सभी भागों में गांधी जी के नेतृत्व में कार्यकर्ताओं ने जाति के कर्मकांडीय स्वरूप का धोर विरोध किया एवं हरिजनोत्थान के लिए अथक प्रयास किया।"[20]

समकालीन समय में जाति के नये आयाम

प्रो. रजनी कोठारी का मानना है कि स्वतंत्र भारत में जातियों का राजनीतिकरण हुआ है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके अंतर्गत जातियों की शासन संरचना में महत्व राजनीतिक एवं वर्गीय चेतना के कारण होती है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से ही लोकतांत्रिक शासन–प्रणाली के अंतर्गत जातियों का महत्व उनके संख्यात्मक बहुलता के आधार पर हैं। वर्तमान समय में सामाजिक रूप से पिछड़ी समझी जाने वाली जातियां भारतीय राजनीति में प्रमुख स्थान रखती है। जैसे– उत्तर भारत में जाटव, यादव, कुर्मी आदि जातियां। वर्तमान समय में सुश्री मायावती, राम विलास पासवान, लालू प्रसाद यादव, मुलायम सिंह यादव, नीतिश कुमार, उमा भारती, अशोक गहलौत, वी. सदानंद गौड़ा जैसे नेताओं ने भारत की राजनीति को एक नया आयाम दिया है और भारत की राजनीति को **सैण्ड़विच**– गठबंधन बना दिया है। इस गठबंधन की भारतीय समाज में शीर्ष व आधार पर स्थिति जातियां एक साथ आयी। इस गठबंधन में नेतृत्व दलित एवं पिछड़ी जातियों के द्वारा किया गया। "यह गठजोड़ कांग्रेस पार्टी की **इंद्रधनुषीय** गठबंधन से अलग था, क्योंकि **इंद्रधनुषीय** गठबंधन में नेतृत्व एवं शीर्ष पदों पर मुख्यतः सवर्णो का ही आधिपत्य था।"[21] इतना ही नहीं, स्थानीय स्वषासन की राजनीति में भी पिछड़ी एवं दलित जातियों का ही वर्चस्व दिखायी देता है।

जातियां चुनाव में विजयी होने के लिए गठबंधन करती हैं। तथाकथित पिछड़ी जातियों द्वारा वर्तमान समय में नये–नये जाति–संघ स्थापित किया जा रहा है, ताकि शासन सत्ता में जाति–संघ प्रभावी भूमिका का निर्वहन कर सकें। भारतीय राजनीति एवं शासन संरचना में जाति–संघ अपने सदस्यों को स्वजातीय उम्मीदवारों के पक्ष में मतदान करने के लिए प्रेरित करती हैं। प्रसिद्व दलित चिंतक श्री चंद्रभान प्रसाद के अनुसार जाति–संघ राजनीति में अत्यधिक शक्तिशाली होते जा रहे हैं। ये

जाति–संघ सरकारी नौकरियों एवं निजी क्षेत्रों में अपनी जतियों के उम्मीदवारों के लिए आरक्षण की मांग कर रही हैं। इस प्रकार स्वतंत्र भारत में जातियां अपनी स्थिति को मजबूत करने का प्रयास कर रही हैं। अनेकों जाति–संघों जैसे – श्री हार्दिक पटेल की नेतृत्व में सम्पूर्ण गुजरात में अत्यधिक आक्रामकता के साथ बेहद सघन आंदोलन चलाया। श्री पटेल के आन्दोलन से सम्पूर्ण गुजरात का आर्थिक एवं सामाजिक जनजीवन प्रभावित हुआ। कर्नाटक में कापू जाति संघ ने आरक्षण के लिए जोरदार मुहिम चलायी। राजस्थान की गुर्जर जाति–संघ द्वारा किरोड़ी सिंह बैसला की नेतृत्व में अनुसूचित जन जाति की श्रेणी की मांग की जा रही है। हरियाणा में जाट जाति–संघ द्वारा श्री हवा सिंह सांगवान की नेतृत्व में अन्य पिछड़ा वर्ग में षामिल होने के लिए हिंसक आंदोलन चालाया गया और हरियाणा के मुख्यमंत्री श्री मनोहर लाल खट्टर जाट जाति को अन्य पिछड़ा वर्ग में शामिल होने के लिए विवष हए। सर्वविदित है कि, "सन् 2009 में प्रख्यात समाजशास्त्री क्रिस्टोफे जेफ्रैलेट और गिल्स मर्नियर्स ने जातियों के संगठित होकर मतदान करने को **इथनिक वोटिंग** के रूप में परिभाषित किया है।"[22] आशीष नंदी, योगेंद्र यादव, धीरू भाई सेठ जैसे समकालिक विचारक भी मानते है कि, भारतीय राजनीति और जातिवाद के सम्मिलन के उपरांत दलित एवं वंचित वर्गों का उत्थान हुआ है। अतः उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जाति– संघ अपने स्वजातीय समूहों के उत्थान के लिए अधिकतम प्रयास करती है।

प्रो. रजनी कोठारी के अनुसार जाति–प्रणाली विलुप्त नहीं हो सकती है। प्रो. कोठारी के अनुसार "जो लोग राजनीति में जातिवाद की आलोचना करते है, वे वास्तव मे आधारहीन एवं हवाई राजनीति करने का प्रयास करते हैं, ऐसी राजनीति का समाज में कोई आधार नहीं है। संभवतः ऐसे लोग न तो राजनीति की प्रकृति समझ पाते है और न ही जाति–प्रणाली की प्रकृति को। "[23] "भारत की राजनीति में जाति के बढ़ते प्रभाव के कारण ही प्रसिद्ध पाकिस्तानी शायर फहमीदा रियाज ने भारतीय बुद्विजीवियों से संवाद करते हुए कहा – "तुम बिल्कुल हम जैसे निकले, कहा छिपे थे भाई।"[24] राजनीतिक– प्रक्रिया में समर्थन हासिल करने और उसे उत्तरोत्तर मजबूत करने के लिए विद्यमान सामाजिक ढांचे को चिन्हित करते हुए राजनीतिक दलों द्वारा जातीय गठजोड़ बनाया जाता है। जैसे – 16वीं विधान सभा में बसपा द्वारा दलित – ब्राह्मण गठजोड़ या सपा द्वारा यादव–मुस्लिम–ठाकुर गठजोड़।

वर्तमान उ.प्र. की 17वीं विधान सभा चुनावों का विश्लेषण के उपरान्त कहा जा सकता है कि, समकालीन समय में राश्ट्रीय राजनीतिक दलों द्वारा चुनावों में जाति आधारित दलों के साथ गठजोड़ किया जाता है तथा सरकार गठित की जाती है। जैसे–उ.प्र. के सन 2017 के विधान सभा चुनावों में भारतीय जनता पार्टी ने श्री ओमप्रकाष राजभर के नेतृत्व वाली भासपा एवं सुश्री अनुप्रिया पटेल की नेतृत्व वाली अपना दल से गठजोड़ किया। संयोगवश यह गठजोड़ चुनाव के पष्चात विजयी गठजोड़ बनकर उभरा। वर्तमान समय में भारतीय राजनीतिक दलों द्वारा चुनावी राजनीतिक प्रक्रिया को देखते हुए हम कह सकते है कि, " जाति एवं लोकतांत्रिक राजनीति का आपस में सम्मिलन हो गया है। "[25] इतना ही नही, "सामाजिक – राजनीतिक विदुषी सुश्री जोया हसन ने उत्तर–प्रदेष की 17वीं विधानसभा चुनावों का विश्लेषण करते हुए चुनाव परिणामों को **भगवा तूफान** की संज्ञा दी है।"[26] सुश्री हसन इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि भारतीय जनता पार्टी ने हिंदुत्व एवं विकास का दिवास्वप्न दिखा कर जनता का मत प्राप्त किया है। यही भारतीय राजनीति में च्वेज जतनजी या **सत्यातीत युग** है। इतना ही नहीं, सुश्री हसन का मानना है कि भाजपा ने इस चुनाव में अगड़ों, गैर यादव पिछड़ों, गैर जाटव दलितो के मतों के सहारे ही प्रचंड बहुमत प्राप्त हुआ है। अतः हम कह सकतें है कि भारत में जाति का ढांचा सर्वाधिक महत्वपूर्ण संगठनात्मक समूह प्रदान करता है, इसलिए राजनीति ऐसे ही ढांचे के इर्द–गिर्द धूमती हुए दृष्टिगोचर होती है। राजनीति में जातिवाद की आलोचना जाति की राजनीतिकरण के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

प्रो. रजनी कोठारी का कहना है कि जाति और राजनीति के बीच एक–दूसरे से लाभान्वित होने

की प्रक्रिया है। जाति–प्रणाली और इसके संगठनात्मक ढांचे के माध्यम से राजनीति को अपने कार्य–क्षेत्र हेतु महत्वपूर्ण आधार प्राप्त होता है। सुदृढ सामाजिक आधार का प्रायोग राजनीतिक दल अपने दलीय विस्तार को सुदृढीकरण हेतु करते हैं। दूसरी तरफ जातियों को राजनीतिक प्रक्रियाओं के माध्यम से अपनी पहचान बनाने और समाज में अपनी स्थिति सुदृढ़ करने का अवसर प्राप्त होता है। इस तरह से आपस में अंतःक्रिया करने वाली सत्ता के लिए संघर्षरत जातियां भारतीय समाज एवं राजनीति की वास्तविक अभिनेता हैं।

राजनीतिक अभिजन अपनी सत्ता और शाक्ति की सुदृढ़करण हेतु जातिगत – समूहों की वास्तविक शाक्ति (मतदाताओं की संख्या) को पहचान कर उसे अपने समर्थन के लिए प्रोत्साहित करते हैं। जैसे – पश्चिमी उत्तर प्रदेश में भीम सेना। इस संगठन के मुखिया का कहना है कि उनके संगठन का कार्य अपने जाति के हितों की रक्षा एवं संवर्धन करना है। इतना ही नहीं, जातियां अनन्य रूप से संगठन को लोचशील आधार प्रदार करती हैं। भारतीय समाज में जाति एवं राजनीति के संबध अनेक वर्षो समाजविदों द्वारा गंभीर अध्ययन का विशय रहा है। **ऐंद्रे बेताई, ग्रेनविल आस्टिन, रूडोल्फ एवं रूडोल्फ, अनिल भट्ट, एम.एन. श्रीनिवास, मारिस जोंस, बी.आर. अम्बेडकर, कांशीराम** आदि राजनीतिज्ञ एवं विचारकों ने जाति एवं राजनीति के विभिन्न पहलुओं को अपने–अपने ढ़ंग से रेखांकित किया है। क्रिस्टोफे जेफरलांट जैसे सिद्धान्तकारों ने माना है कि, "90 के दशक में मंडल आंदोलन के दौरान उत्तरी भारत में वचिंत वर्गो में अपने अधिकारों के प्रति **मूक क्रांति** हुयी।"[27] मंडल आंदोलन के परिणामस्वरूप आयी वर्गीय चेतना के कारण ही श्री लालू प्रसाद, षरद यादव, मुलायम सिंह पिछड़े वर्ग के मसीहा के रूप में उभरे। इन नेताओं को शाासन संरचना में देखकर पिछड़ी एवं दलित जातियों में राजनीतिक सषक्तीकरण का भाव उत्पन हुआ। सन् 1990 के पश्चात् मंडल आयोग की सिफारिशे लागू होने के पश्चात् तथाकथित पिछड़ी जातियों का आर्थिक विकास बहुत तीव्र गति से हुआ है। "यह सर्वविदित है कि जाट, यादवों, रेड्डियों, वन्नियारों, नाडारों, पाटीदारों एवं मराठे भारतीय समाज में नए अभिजन बनकर उभरे है।"[28] इतना ही नहीं, "क्रिस्टोफे जेफरलांट ने भारतीय राजनीति में दलित एवं पिछड़ी जातियों की उपलब्धियों पर 500 पृष्ठो का सारगार्भित लेख लिखा।"[29] इस लेख की प्रशंसा समकालीन भारतीय राजनीति विज्ञानियों एंव समाज विज्ञानियों द्वारा की गई है।

"एम.एन. श्रीनिवास के अनुसार, राजनीति में जाति द्वारा निभायी जाने वाली भूमिका को आधुनिक राजनीति में दबाव समूह के निकटस्थ मानी जाती है।"[30] प्रख्यात् राजनीतिक विद्वान रूडोल्फ का भी मानना है कि "वर्गीय चेतना के कारण ही दलित एवं वंचित जातियों का उत्थान हुआ है।"[31] इतना ही नहीं, राज्यों की राजनीति में प्रधान जाति को संख्यात्मक दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। प्रसिद्व संविधानविद् सुभाष काश्यप का मानना है कि हरियाणा की राजनीति में जाति, राजनीतिक दलों से अधिक महत्वपूर्ण है। हरियाणा में चुनावों के समय यह नारा लगता है कि **"जाट की बेटी जाट को, जाट का वोट जाट को।** "[32] जाटों की राजनीतिक जागरूकता के कारण ही हरियाणा के अधिकांश मुख्यमंत्री जाट ही होता है। इतना ही नहीं, शेष भारत में भी राज्यों की राजनीति में संख्यात्मक रूप से प्रभावशाली जाति के राजनीतिज्ञों का वर्चस्व हैं। जैसे– गुजरात में पटेल, आन्ध्र प्रदेष में रेड्डी, कर्नाटक में लिंगायत एवं वोकलिंगा और उत्तरी भारत में अन्य पिछड़ा वर्ग के सदस्य ही शासकीय संरचना में अभिजन के रूप में अपनी भूमिका का निर्वहन कर रहें हैं।

यह सर्वविदित है कि, भारतीय सामाजिक–व्यवस्था में अस्पृश्यता जैसी कुरीति दलितों एवं गैर दलितों के मध्य के होने के साथ–साथ अस्पृश्य जातियों के मध्य भी है। "जैसे – आंध्र प्रदश में गाला जाति के लोग स्वयं मदीगा जाति से श्रेष्ठ मानते हैं। इस प्रकार से महाराष्ट्र की महार जाति स्वयं को वेड, मांग तथा अन्य दलित समूहों से श्रेष्ठ मानती है। "[33] पहले यह टकराव अर्न्तजातीय (Inter caste) था, अब यह टकराव दोहरा हो गया है। भारतीय समाज में उर्ध्वमामिता की इच्छा के अनेक रूप है यह प्रवृति– ब्राह्मणीकरण की है। आर्थिक उन्नति राजनीतिक

एकता और बुद्विवाद की सार्वजनिक प्रवृत्तियों के प्रभाव से अक्सर अब्राह्मण जातियां में ब्राह्मणों की नकल करने की प्रवृत्ति विकसित हो जाती है। जैसे–"पिछले साल में जुलाहा था, इस साल शेख हूं और अगले साल फसल अच्छी हुई तो सैय्यद बन जाऊंगा"[34]।

यह प्रवृति भारत में सिर्फ हिन्दुओं में ही नहीं मुस्लिमों, सिक्खों, क्रिश्चन धर्मो में भी है। जैसे – मुस्लिम समाज में भी **पसमांदा, लालबेगी, हलालखोर, सिक्खों में मजहबी सिक्ख एवं ईसाई धर्म** में **नव ईसाई** जैसी दलित जातियां हैं।

अंततः हम कह सकते है कि भारत की लोकतांत्रिक एवं राजनीतिक व्यवस्था ने विभिन्न जातियों को अधिक से अधिक राजनीतिक लाभों के लिए प्रोत्साहित किया है। प्रो. रजनी कोठारी के शब्दों में यह लाभ जाति की गोलबंदी के माध्यम से प्राप्त हुआ। इतना ही नहीं, राजनीतिक लाभ के कारण ब्राह्मण एवं दलित एक झंडे के तले आये, ताकि उनके हितों की रक्षा हो सके एवं उनकी जाति सशक्त बनकर उभरे। जातियों ने वर्तमान समय में अपनी प्रासंगिकता बनाये रखने के लिए परंपरावादी एवं रूढ़िवादी मूल्यों को तिलांजलि दे दिया है। इतना ही नहीं, जातियों ने आधुनिक राजनीति के मूल्यों को बड़ी मात्रा में अपनाया। फलतः जातीय–व्यवस्था का स्वरूप परिवर्तित हो गया। "शायद इसलिए रूड़ाल्फ का कहना है कि भारत में जाति– व्यवस्था का पूर्ण रूप से अंत नहीं होगा, वरन् जाति अपनी प्रासंगिकता बनाये रखने के लिए नवीन मूल्यों का समावेश करती है।" [35] अतः हम कह सकते है कि यर्थाथ में जाति–संघ एक ऐसा माध्यम बन गया है, जिसके जरिए भारत के दलित, पिछड़े, अल्पसंख्यक एवं हाशिए पर स्थित जातियां लोकतांत्रिक राजनीतिक प्रक्रिया से अपने को जोड़कर देश की मुख्य धारा में अपनी सशक्त एवं प्रभावी भूमिका का निर्वहन करती हैं।

सन्दर्भ –

1. मिश्र, जयशंकर : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना, वर्ष 1999, प्रष्ठ 143
2. सिंह, रवि प्रताप : रजनी कोठारी का राजनीतिक चिंतन : साहित्य संस्थान, 2016 , पृष्ठ 24
3. हट्टन, जे. एच. : भारत में जाति–प्रथा : स्वरूप, कर्म और उत्पति : मोतीलाल बनारसी दास 2007, पृष्ठ 46,47
4. मल्होत्रा, राजीव एवं नीलकन्दन, अरविन्दन : भारत विखंडन हार्पर कॉलिंस, पब्लिषिंग, इंडिया दिल्ली, पृष्ठ 72
5. गैलेंटर, मार्क, कम्पटीटिव इक्वैलिटीज़, आक्सफोर्ड प्रकाशन, नई दिल्ली, 1984, पृश्ठ 7
6. मंगलानी, रूपा : भारतीय शासन एवं राजनीति, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 2009
7. दिनकर, रामधारी सिंह, संस्कृत के चार अध्याय, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2015, पृष्ठ 263
8. नारंग, अमरजीत सिंह : भारत शासन एवं राजनीति : गीतान्जली पब्लिशिंग हाउस, 2009–10, नई दिल्ली, पृष्ठ –329
9. कोठारी, रजनी : राजनीति की किताब, अनुवाद अभय कुमार दुबे, वाणी प्रकाशन, 2003, पृष्ठ 208
10. नारायण, इकबाल : स्टेट पॉलिटिक्स इन इंडिया, मेरठ, मीनाक्षी प्रकाशन, 1967, पृश्ठ 22
11. मैनर, जेमन : प्रोलोंग : कास्ट एंड पॉलिटिक्स इन रिसेंट टाइम, ओरियंट लॉगमैन 2010, पृष्ठ 21
12. अम्बेडकर, भीमराव : शूद्र कौन थे : म.प्र. हिंन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2005, पृष्ठ 140
13. पायली, एम.बी. भारतीय संविधान का परिचय, विकास पब्लिकेषन हाऊस प्रा. लि., नई दिल्ली, 1996, पृष्ठ 86
14. सिंह, महेंद्र प्रसाद, राय, हिमांशु : भारतीय राजनीतिक प्रणाली संरचना, नीति और विकास, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली, 2013, पृष्ठ 685
15. चंद्र, विपन : समकालीन भारत, अनामिका पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2015, पृश्ठ 42

16. चंद्र, विपन : आजादी के बाद का भारत, हिंन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली वि.वि., दिल्ली, 2010 पृष्ठ 646
17. तेलतुंबड़े, आनंद : जनवादी समाज और जाति का उन्मूलन, आधार प्रकाशन, पंचकूला, 2016, पृष्ठ 28
18. ओमवेद, गेल : दलित और प्रजातांन्त्रिक क्रांति : सेज पब्लिकेंशन, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ 104
19. सिंन्हा, सच्चिदानंद : जाति व्यवस्था : राजकमल प्रकाषन, नई दिल्ली, 2007, पृष्ठ 214
20. चंद्र, विपिन : भारत का स्वतंत्रता संधर्ष : हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विष्व विद्यालय, दिल्ली, 2008 पृष्ठ 230
21. वर्मा, अनिल कुमार : शोधार्थी भारतीय राजनीति पर विशेष सामाग्री लोकनीति
22. मैनर, जेमन : प्रोलोंग : कास्ट एंड पॉलिटिक्स इन रिसेंट टाइम, ओरियंट लॉगमैन 2010, पृष्ठ 21
23. कोठारी, रजनी : कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, ओरिऐंट लॉगमैन, नई दिल्ली, 1970, पृष्ठ 44
24. राय, विभूति नाराण द्वरा दैनिक हिंदुस्तान समाचार पत्र में 25 अप्रैल 2017 को प्रतिपादित लेख।
25. कोठारी, रजनी : राजनीति की किताब, अनुवाद अभय कुमार दुबे, वाणी प्रकाशन, 2003, पृष्ठ 208
26. सुश्री हसन, जोया का लेख दैनिक समाचार पत्र हिंदू में 14–03–2017 को प्रकाशित हुआ।
27. चौबे, कमल नयन : जातियों का राजनीतिकरण, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ 17
28. वर्मा, पवन कुमार : भारत के मध्य वर्ग की अजीब दास्तान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2015, पृष्ठ 112
29. माथुर, कुलदीप : आइ.सी.एस.एस.आर., जर्नल ऑफ एब्सट्रेक्ट एंड रिव्यु पोलिटिकल साइंस वा 10 पृष्ठ 52।
30. श्रीनिवास, एम.एन. : भारत के गांव, अनु. मधु. वी. जोशी, राजकमल प्रकाषन, दरियागंज, 2011, पृष्ठ 11
31. रुडोल्फ एंड रुडोल्फ; द मॉडर्निटी ऑफ ट्रेडिशन, पोलिटिकल डेवलपमेंट इन इंडिया, ओरिएंट लांग मैन, हैदराबाद 1967 पृ0 79
32. काश्यप, सुभाष : दल बदल की राजनीति, जैन बुक डिपो, दिल्ली, 1998, पृष्ठ 112–13
33. दुबे, श्यामाचरण : भारतीय समाज (अनुवाद वन्दना), नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली 1985, पृष्ठ 49
34. दुबे, अभय कुमार : सेक्युलर साम्प्रदायिक, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ 103–104
35. सईद, एस.एम. : भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, भारत बुक सेंटर, लखनऊ, 2013, पृष्ठ 366–67